भोजपुरी

लोक कथाएं

मदन मोहन सिन्हा 'मनुज'

भोजपुरी

लोक कथाएं

मदन मोहन सिन्हा 'मनुज'

भोजपुरी लोक कथाएं

मदन मोहन सिन्हा 'मनुज'

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : ज्येष्ठ 1912 (जून 1990)
द्वितीय संस्करण : पौष 1917 (दिसम्बर 1995)

© प्रकाशन विभाग

ISBN: 81-230-0388-9

मूल्य : 18.00 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केंद्र ● प्रकाशन विभाग

- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, बंबई-400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069
- एल.एल.ए. आडीटोरियम, 736, अन्नासलै, मद्रास-600002
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम-695001
- 27/6, राम मोहन राय मार्ग, लखनऊ-226001
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डंस, हैदराबाद-500004

आकाशदीप प्रिन्टर्स, 20, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 द्वारा मुद्रित

आमुख

लोक कथाएं न जाने कब से कही-सुनी जा रही हैं। कथा-कहानी सुनने में किसका मन नहीं रमता। कभी-कभी तो सारी रात आख्यानों को सुनते और सुनाते बीत जाती है। कथाएं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी और एक कंठ से दूसरे कंठ तक गुजरती हुई शताब्दियों की देश-देशांतर की अनंत यात्रा पूरी करने में लगी हुई हैं। सुख-दुख बांटने की आदिम प्रवृति, कथाओं को श्रोता प्रदान करती है और किसी से अपना दुख कहने सुनने की आदिम प्रवृति ही कथा कहने की सहज प्रेरणा बनती है।

लोक कथाओं को यदि जीवनीशक्ति प्रदान करने वाली सम्प्रेषण विद्या माना जाए तो यह सम्भवतः अधिक सही होगा। तभी तो कथा-कहानियों ने आज भी अपना आकर्षण नहीं खोया, चाहे वह मौखिक रूप से कही जाए या लिखित रूप से। यद्यपि मौखिक कथा कहने की परम्परा पुरानी है और यह एक ऐसा जीवंत सम्प्रेषण शिल्प है जो सीधा संवाद, कथा कहने और सुनने वाले के बीच स्थापित करता है किन्तु फिर भी भारत सहित दुनिया के तमाम देशों में छापेखाने के प्रचलन के बाद कहानियां लिखने पढ़ने का चलन जोर पकड़ता गया और इस सिलसिले में कहानी लोक कथाओं के मूल स्पंदन से बहुत दूर जा चुकी है और उसके साहित्यिक समालोचन के जो आधार सामने आए हैं, वे उसे लोक कथाओं के मूल स्वर से काटते से लगते हैं।

लोक कथाएं तो ज्ञान का भंडार हैं, उनमें सामान्य जन को शताब्दियों के विचार-मंथन से प्राप्त जीवन मूल्यों, आदर्शों, मानवीय राग-द्वेष, अभिलाषाओं-आकांक्षाओं को किस प्रकार समोकर सहज ढंग से परोसा जाता है, जन साधारण की समझ की परिधि में लाकर किस प्रकार से प्रस्तुत किया जाता है कि वे उनके लिए न केवल सहज ग्राह्य होती हैं, बल्कि कल्पना के आकाश से धरातल पर उतर कर उन्हें अत्यंत विश्वसनीय लगने लगती हैं। संवाद सम्प्रेषण का इससे अधिक प्रभावशाली कोई दूसरा माध्यम नहीं हो सकता। इसलिए आज भी लोक कथाएं संसार को मानवीय स्तर पर जोड़ने में समर्थ हैं, ठीक उसी प्रक़ार जैसे वे अतीत में देश-देशांतर व्यापार के लिए भटकने वाले व्यापारियों, आध्यात्मिक खोज में विचरने वाले परिव्राजकों, साधु-संतों और ज्ञान पिपासु बुद्धिजीवियों और समझदार सामंतों, राजा-महाराजाओं को दुनिया के एक दूसरे भाग में बसने वाले लोगों से परिचित कराने और मेल-जोल बढ़ाने में सहायक रहीं।

लोक कथा की विशेषता ही यही है कि कथाकार अज्ञात हो और उस कथा को कहने वाला और सुनने वाला यह समझ कर आनंद ले जैसे वह अपनी ही जीवन कथा कह-सुन रहा है। इस प्रकार का साधारणीकरण अथवा कथ्य में प्रसादगुण अपने आप में अत्यंत दुर्लभ है। कथा तो कहने सुनने के बाद विस्मृति में क्रमशः विलीन हो जाएगी, किन्तु यदि स्मृति में थोड़ी देर तक इसकी अनुगूंज भी बनी रह जाएगी, तो मैं अपना श्रम सार्थक समझूंगा।

– मदन मोहन सिन्हा 'मनुज'

अनुक्रम

1.	खूंटे में फंसी दाल	1
2.	चंदा	7
3.	अपना-अपना भाग्य	10
4.	भरवीतन	14
5.	नाम में क्या रखा है	17
6.	कौन छोटा - कौन बड़ा	19
7.	[illegible] काहे का	22

खूंटे में फंसी दाल

एक चिड़िया थी, जो रोज दाना चुगने के लिए अपने बच्चों को घोंसले में छोड़कर, दूर जंगलों के पार वस्तियों में उड़कर जाया करती थी। एक दिन किसी घूरे पर उसने एक चने का दाना पाया। वह उसे लेकर चक्की में दलने के लिए गई। दाल दलते-दलते एक दाल खूंटे में फंसी रह गई और एक ही दाल बाहर आई। चिड़िया ने बहुत कोशिश की, लेकिन खूंटे में फंसी दाल नहीं निकली। चिड़िया बढ़ई के पास गई और उसने बढ़ई से खूंटे में फंसी दाल को निकालने के लिए कहा। बढ़ई कुछ और काम कर रहा था, इसलिए उसने ध्यान नहीं दिया। चिड़िया ने उससे बहुत मिन्नत की। उसने कहा:

''बढ़ई बढ़ई खूंटा चीरअ
खूंटा में मोर दाल बा
का खांउ का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?''

बढ़ई ने उसकी एक न सुनी और उसे दुत्कार कर भगा दिया। फिर वह राजा के पास गई। उसने वहां गुहार लगाई – "राजा ऐसे बढ़ई को दंड दो जो मुझ जरूरतमंद की बात नहीं सुनता।"

"राजा राजा बढ़ई दंडो
बढ़ई ना खूंटा चीरे
खूंटा में मोर दाल बा
का खांउ का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?"

राजा के पास कहां इतनी फुरसत थी कि नन्हीं चिड़िया की बात सब काम छोड़कर सुनता। जब उसने भी उसकी विनती पर कोई ध्यान नहीं दिया तो वह रानी के पास गई और रानी से बोली–"हे रानी, तुम अन्यायी राजा का साथ छोड़ दो।"

"रानी रानी राज बुझाव
राजा ना बढ़ई दंडे
बढ़ई ना खूंटा चीरे
खूंटा में मोर दाल बा
का खांउ का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?"

रानी भला अपने राजा को क्यों छोड़ने लगी। रानी ने रोती-बिलखती चिड़िया की एक न सुनी और उसकी बात मानने से इंकार कर दिया।

फिर गोरैया उड़ी, सांप के बिल के पास बैठकर रोने लगी। बिल में से निकले सांप से अपनी विनती दोहराई –

"सर्प सर्प, रानी डंसअ
रानी ना राजा छोड़े
राजा ना बढ़ई दंडे
बढ़ई ना खूंटा चीरे
खूंटा में मोर दाल बा
का खाउं का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?"

उसने अपनी रामकहानी सुनाकर विषैले सर्प से कहा कि तुम जाकर उस रानी को डंसो जो गरीब की गुहार नहीं सुनती। जो रानी सब कुछ जानकर भी हमें राजा से न्याय नहीं दिला सकी और न ही राजा को छोड़ सकी। उसे तुम क्यों नहीं जाकर डंस लेते ? सांप ने भी इस विषय में अपनी असमर्थता प्रकट की।

तब वह भागी-भागी वन में जा पहुँची और उसने बांस से विनती की कि तुम लाठी बनकर इस सांप को मारो।

गोरैया ने कहा :

''लाठी लाठी सर्प पीटो
सर्प ना रानी डंसे
रानी ना राजा छोड़े
राजा ना बढ़ई दंडे
बढ़ई ना खूंटा चीरे
खूंटा में मोर दाल बा
का खाउं का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?''

बांस की लाठी भी भला उस नन्हीं गोरैया के लिए, उस सांप से क्यों बैर मोल लेती। उसने भी इंकार किया तो गोरैया गुस्से से भर उठी और उड़कर भड़भूंजे के यहां भभक रही आग के पास पहुँची और उसे ललकारा—"हे आग, तुम सारे जंगल को जलाकर राख कर दो, जिसमें वह बंसवारी है, जिसकी लाठी मुझ गरीब और बेसहारा के लिए नहीं उठती। कोई मुझे मेरा हक नहीं दिलाता।'' आग ने जब सारी बात विस्तार से जाननी चाही तो गोरैया ने अपनी राम कहानी उसके आगे भी सुना दीः

''लाठी ना विषधर मारे
विषधर ना रानी डंसे
रानी ना राजा तजे
राजा ना बढ़ई दंडे
बढ़ई ना खूंटा चीरे
खूंटा में मोर दाल बा
का खाउं का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?''

फिर आग ने इतनी छोटी सी बात के लिए जब गोरैया की बात मानकर, पूरे जंगल को जलाना ठीक नहीं समझा और जंगल को जलाने से इंकार कर दिया तो गोरैया बहुत दुखी हुई, लेकिन निराश नहीं हुई। वह सागर के पास पहुँची और सागर को उसने अपनी पूरी राम कहानी सुनाईः

''सागर सागर आग बुझाव
आग ना जंगल जारे
जंगल ना लाठी पठवे
लाठी ना विषधर मारे
विषधर न रानी डंसे
रानी ना राजा तजे
राजा ना बढ़ई दंडे
बढ़ई न खूंटा चीरे

खूंटा में मोर दाल बा
का खाउं का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?''

''हे सागर! तुम मेरे साथ चलकर उस आग को सदा के लिए बुझा दो, जो मेरे न्याय की लड़ाई में साथ नहीं दे रही है।'' विशाल सागर भला गौरैया की इस गुहार को क्यों सुनता, वह अपनी मस्ती में ठट्ठे मार-मार कर हंसता हुआ गुजरता रहा और गौरैया उसके किनारे अपना सिर-धुनती बिसूरती रही।

सुबह से शाम होने को आई। गौरैया को जब यहां भी न्याय न मिला तो वह हाथी के पास पहुँची। हाथी के पास उसने अनुनय की कि भइया, तुम चलकर मुझे न्याय दिलवाओ। उस समुद्र को जाकर सोख लो जो मुझ दुखियारी की हंसी उड़ाता है, बलवान होते हुए भी अन्यायी के विरूद्ध खड़ा नहीं होता। जानते हो हमारे साथ क्या बीती, और वह गा-गा कर पूरी कथा हाथी को सुनाने लगीः

''सागर ना आग बुझावे
आग ना जंगल जारे
जंगल ना लाठी पठवे
लाठी ना विषधर मारे
विषधर ना रानी डंसे
रानी ना राजा तजे
राजा ना बढ़ई दंडे
बढ़ई ना खूंटा चीरे
खूंटा में मोर दाल बा
का खाउं का पिउं
का ले के परदेस जाउं ?''

हाथी भी गौरैया की बात सुनकर टस से मस न हुआ। उसने भी उसका साथ न दिया और उसकी बात को हवा में उड़ाता हुआ, अपने लम्बे-लम्बे सूप जैसे कान हिलाता हुआ मस्ती से झूमता आगे निकल गया।

अब नन्हीं गौरैया का धीरज टूटने लगा। वह थककर चूर हो गई थी। जहां की तहां बैठी लाचार सी होकर आंसू बहाने लगी। सारी दुनिया उसे अंधेरी दिखाई देने लगी। किसको-किसको उसने अपनी कहानी नहीं सुनाई परन्तु किसी ने उसकी मदद नहीं की। बेसहारा लाचार की करुण पुकार पर कोई ध्यान नहीं देता। तभी उसके पैरों के पास एक नन्हीं सी चींटी आकर उसका हाल पूछने लगी। उसने देखा नन्हीं-नन्हीं चींटियों की एक लम्बी कतार एक के पीछे एक बहुत ही अनुशासित ढंग से चली आ रही है। उसने ध्यान से देखा उनका अद्‌भुत संगठन और अथक परिश्रम। वे बड़ी फुर्ती, तत्परता और सुनियोजित ढंग से अपना काम मिलजुल कर किए जा रही थीं।

चींटियों ने आकर उसे घेर लिया और गौरैया से पूरा वृत्तांत सुना। सुनकर सहानुभूति के साथ बोलीं, ''बहिना! इस दुनिया में रोने गिड़गिड़ाने से काम नहीं चलता और न ही बैठकर आंसू बहाने

से कुछ होता है। हिम्मत हार कर बैठना तो कायरता है, चलो हमारे साथ, हम न्याय दिलाएंगी, कोई रास्ता निकालेंगीं।'' चलते-चलते चिड़िया यह सोचती गई, भला यह नन्हीं-नन्हीं चींटियां मेरी क्या मदद करेंगी, जबकि बड़ों-बड़ों ने मुझ से मुख मोड़ लिया और मेरे काम न आए। अजीब दुनिया है! सब सुख के साथी हैं, दुख में कोई काम नहीं आता। खैर चलो देखते हैं, कोई तो मेरी मदद के लिए आगे आया है। चींटी बहिना हमारा साथ देने चली है तो उसकी फौज भी तो है उसके पीछे, फिर घबराना क्या ? देखते हैं क्या होता है ?'

गोरैया सोचती चली जा रही थी चींटी रानी के पीछे-पीछे। तभी चींटी ने उसे कहा, ''तुम किसी पास के पेड़ की डाल पर थोड़ी देर बैठो और देखो मैं क्या करती हूं, कैसे पहाड़ जैसा हाथी मेरे इशारे पर नाचने लगता है और तुम्हारे काम के लिए दौड़ा-दौड़ा समुद्र के पास जाता है। हिम्मत हारने से कुछ नहीं होता। मिलजुल कर जुगत लगाने से ही समस्याओं के समाधान का रास्ता निकलता है।''

गोरैया फुर्र से पास के पेड़ की डाल पर जा बैठी और चकित होकर चींटी की असम्भव सी लगने वाली बातों को कारगर होते अपनी आंखों के सामने देखती रही।

चींटी धीरे-धीरे हाथी के पैर से सरक कर उसके कान तक जा पहुंची। हाथी अपने सूप जैसे कान हिलाता, सूंड से अपने माथे पर फूंक मारता ही रह गया और चींटी उसके कान में घुस कर उसे तंग करने लगी और उसे समझाने लगी, ''बड़े-बड़े बलवान यदि अपने बल अहंकार में चूर होकर दीन-हीन छोटों की सहायता न करें तो उन्हें भी भान होना चाहिए कि काम पड़ने पर छोटे भी यदि अपनी आन-बान के लिए अड़ जाएं तो बड़ों-बड़ों के लिए संकट पैदा कर सकते हैं। अभी तो मैं अकेली आई हूं किन्तु मेरे पीछे असंख्य चींटियों की लम्बी कतार चली आ रही है। कहीं सबने एक साथ चढ़ाई कर दी तो लेने के देने पड़ जाएंगे। अपने प्राण संकट में क्यों डालते हो ? मेरी नेक सलाह तुम्हारे लिए यही है कि सीधी तरह चलकर गोरैया का काम करो नहीं तो मैं कान के भीतर जाकर चिकोटी काटूंगी कि जान पर बन आएगी।'' मरता क्या न करता। हाथी झुंझलाहट और घबराहट में चींटी की बात मानने को लाचार हो गया। वह यह कहते हुए गोरैया के काम के लिए सागर सोखने को तैयार हो गयाः

''मोहे काटो ओटो मत कोई
हम सागर सोखबि लोई।''

चींटी ने हाथी का पिंड छोड़ दिया और गोरैया उसे धन्यवाद देते हुए हाथी के पीछे-पीछे उड़ती वापस सागर की ओर लौटी। हाथी जैसे ही सागर के पास उसे सोखने के इरादे से पहुंचा, सागर हाथ जोड़कर बोलाः

''मोहे सोखो वोखो मत कोई,
हम आग बुझाइब लोई।''

सागर जब अपने तटों की सीमा छोड़कर आग बुझाने के लिए उमड़ा, आग ने थर-थर कांपते हुए गोरैया का काम करने का वचन दिया और कहाः

''मोहे बुझाओ उझाओ मत कोई,
हम जंगल जारब लोई।''

आग जंगल को जलाने के लिए बढ़ी, गोरैया भी साथ चली आ रही है, यह जानकर जंगल ने भी वादा किया— मैं लाठी को सांप मारने के लिए तुरंत भेजता हूं लेकिन मुझे जलाकर राख मत करोः

''मोहे जारो ओरो मत कोई
हम संपवा मारब लोई''

सांप की क्या मजाल जो जंगल की बंसवारियों में अनगिनत लाठियों की मार से भयभीत न हो। उसने भी बिल से बाहर आकर गोरैया को भरोसा दियाः

''मोहे मारो ओरो मत कोई
हम रानी डंसब लोई।''

रानी ने जब सांप को महल में आते देखा और उसके साथ गोरैया को आते देखा तो वह पूरी बात का अनुमान कर, भय से पसीने-पसीने हो गई। उसने हाथ जोड़कर विनती कीः

''मोहे डंसो ओसो मत कोई
हम राजा तजब लोई।''

रानी के उस वचन के बाद भला राजा क्यों अपने हठ पर टिकता ? उसे तो गोरैया के धीरज, अथक परिश्रम और सूझबूझ का समाचार मिल चुका था। उसने अपनी लापरवाही और अन्याय के लिए क्षमा मांगते हुए, फौरन बढ़ई को बुलाने का वचन दिया और कहाः

''मोहे तजो ओजो मत कोई
हम बढ़ई दंडब लोई।''

फिर क्या था। बढ़ई ने आकर राजा के सामने गोरैया की बात न मानने का अपराध कबूल किया और थर-थर कांपते हुए राजा से गिड़गिड़ाया और विनती कीः

''मोहे दंडो वंडो मत कोई
हम खूंटा फाड़ब लोई।''

गोरैया को और क्या चाहिए! गोरैया बढ़ई के साथ उस चक्की के खूंटे के पास पहुंची जिसमें चने की एक दाल फंसी थी। बढ़ई ने खूंटे से दाल निकाल कर दी और गोरैया उसे अपने चोंच में लेकर अपने घोंसले में पहुंची, जहां उसके नन्हें-नन्हें बच्चे जब से वह गई थी, उसकी राह में आंखें बिछाए भूखे-प्यासे बैठे थे। बच्चों ने चहचहाकर उसका स्वागत किया और वह अपने चोंच से चने का दाना अपने बच्चों को खिलाने लगी और गुनगुनाकर अपने बच्चों को अपनी पूरी कहानी सुनाने लगी कि कैसे उसने हिम्मत से काम लिया और बड़ों-बड़ों ने उसकी बात मानकर उसकी मदद की और कैसे जब वह केवल रोती-गिड़गिड़ाती रही तो किसी ने भी उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। मदद के लिए आगे आईं तो वे चींटियां जिनकी संगठित सेना के सामने हाथी भी लाचार हो गया। सच ही कहा है—'सब उसी की मदद करते हैं जो स्वयं अपनी मदद करना जानता है।' □

चंदा

एक थी चंदा। अपने बाप की अकेली बेटी। उसके पिता के थे सात-सात लड़ैते लाल। सात भाइयों की दुलारी चंदा। उसके भाई दिन-रात उसका मुंह निहारा करते। उसकी भौंजाइयां उसको हथेली पर लिए रहतीं। नाज-नखरा उठातीं, जो कहती, सो करतीं। मजाल थी, कोई उसे कुछ कह सकता। वह जो चाहे करती। उसके भाई उसकी फरमाइश पूरी करने के लिए हरदम तैयार रहते। उसके मुंह से कोई बात निकलती नहीं कि उसके भाई उसे पूरी कर देते।

देखते-देखते समय बीत गया। उसके भाई परदेस जाने को हुए। बहन रोकती रह गई मगर भाइयों को रोजी-रोटी कमाने जाना था सो चले गए। जाते-जाते वह अपनी बहन को चन्द्रहार ले आने का वचन दे गए और चन्द्रहार लेने की बात में लगाकर वे अपनी बहन को उसकी भौजाइयों के सहारे छोड़कर चले गए। समझा गए थे, देखना हमारी बहन को कोई दुख न होने पाए। पन्द्रह साल बाद परदेस से चंदा के भाई अपनी बहन के लिए कठिन कमाई से पैसे बचाकर भेंट देने के लिए चन्द्रहार लाए। उसका माथा गर्व से ऊंचा हो गया। इधर बड़ी तैयारी से उसके भाइयों ने गौने की तिथि निकलवाई और उसे ससुराल भेज दिया। चंदा अपने साथ बहुत ढेर सा साज-सामान अपने भाइयों के घर से ले गई थी। ससुराल में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा हुई।

थोड़े दिन बाद वह अपनी घर-गृहस्थी सम्भालने लगी। वह अपने ससुरजी के लिए मुंह हाथ धोने का पानी, देवर के लिए कलेवा, ननदों की कंघी-चोटी और पति के लिए पीने का पानी लिए इधर से उधर डोलती रहती। सब उससे बहुत खुश थे। तभी एक दिन जब वह अपने ससुर को घड़े से पानी डालकर दे रही थी, उसके गले का चन्द्रहार देखकर उसके ससुर ने पूछा, "तुमने यह कीमती हार कहां से पाया ? हमारे यहां से तो तुम्हें यह भेंट में नहीं दिया गया था।" चंदा गर्व से बोली कि मेरे पिता के सात बेटे हैं, उनकी मैं एक ही तो दुलारी बहन हूं। उन्होंने ही मुझे यह चन्द्रहार अपनी पहली कमाई से लाकर दिया है। ससुरजी को यह गर्वोक्ति अच्छी नहीं लगी। संदेह उनके मन में जहर घोलने लग गया और वह अपनी शंका अपने परिवार के दूसरे लोगों के सामने जब तक प्रकट करते, तब तक चंदा के जेठ ने भी उसके गले में चन्द्रहार देखकर ऐसा ही कहा और चंदा ने बहुत ही विनय के साथ वही बात दोहरा दी जो उसने अपने ससुर जी को कही थी।

ननद- देवर क्यों चुप रहने लगे ? हंसी ठिठोली के बहाने वे भी उसका उपहास करने लगे। उसके पति ने भी उस पर संदेह किया।

किसी ने भी चंदा की सीधी सच्ची बात नहीं मानी और सभी ने चंदा से किरिया (कसम)मांगी। वह कसम उठाने को उठा सकती थी, लेकिन उसे भी कोई झुठला देता तो वह क्या करती? बस, उसने अपने मन में सत्य की परीक्षा देने की ठानी। अपने नैहर और ससुराल का मान रखने वाली तथा कुलशील की रक्षा करने वाली कुलवधू ने अपने पिछवाड़े बसने वाले लुहार भाई से धर्म की कढ़ाही गढ़ने का अनुरोध किया और तेल पेरने वाले तेली भइया से कड़वा तेल पेरने को कहा।

फिर अपने नैहर के साथी सुगना से भाई के पास सारा हाल कहलवाया। सत्य की परीक्षा हुई। लोक गीतों में आगे की कहानी का वर्णन इस प्रकार किया गया हैः

ऊंचे-ऊंचे बइठे मोरे ससुरा लोगवा रे ना।
राम खालवा बइठे भइया बाबा रे ना।
बड़ी पाग बान्हें ससुरे के लोगवा रे ना।
रामा भइया बाबा बान्हें अंगउछवा रे ना।
रामा तेही बिच चढ़लि बा कड़हिया रे ना।
रामा तेही ढिग ठाढ़ी सती चंदा रे ना।।

भाई का स्नेह, धर्म की मर्यादा की रक्षा के लिए बहन से कहता हैः

''जो चंदा बहिनी तू पक्की ठहरबू रे ना।
बहिनी तोरे जोगे डंडिया फनाइबि रे ना।
जो तू हो बहिनी कच्ची ठहरबू रे ना।
तोहका जियतइ गड़ना गड़ाईब रे ना।।''

बहन चंदा खोलते तेल के कड़ाह में अपना हाथ डालते हुए शपथ लेती हैः

''जो मोरा सामी होंई मोरा मन के बसिया रे ना।
रामा आगि होई जाऊ जूड़ पलवा रे ना।।''

अरे, यह क्या!

जो चंदा दिहली करहिया में हथवा रे ना।
रामा जइसे गंगाजल पनिया रे ना।।

दूध का दूध, पानी का पानी। जब चंदा इतनी बड़ी परीक्षा में सच्ची उतरी तो फिर क्या पूछना है। गर्व से भाइयों की छाती चौड़ी हो गई। किंतु.....किंतु क्या ऐसी सती का इतना सब कुछ होने पर भी अपने ससुराल में रहना उचित था ? भाई नैहर विदा करा ले गए। किंतु पश्चात्ताप में जल रहे पति को, अपने ससुराल को, छोड़कर इस प्रकार चले जाना क्या उचित था? चंदा के मन में विचारों की आंधी चल रही थी। भाई डोली ले आए थे, विदा कराकर लिवा ले जाने के लिए और पति अपनी सती-साध्वी पत्नी के, सदा के लिए घर छोड़कर चले जाने की आशंका से अधीर होकर रो रहा थाः

मुंहवा रूमलिया देके रोए ओकर समिया रे ना।
रामा मोर सती छोड़ि चलि जइहें रे ना।
हाल अइसन देखि देखि भइया बढ़ैता रे ना।
हाल बहिनी जोगे डंडिया फनावे रे ना।।

पति का घर छोड़ कर सती को जब उसके भाई लिवाए लिए जा रहे थे, तो वन की एक तपस्विनी ने समझाया कि अपने पति के अपराध को मन में नहीं रखते। जाओ, वापस लौट जाओः

एक बन गइली दोसरे बन गइली रे ना।
राम तिसरे भेंटइली बन तपसिने रे ना।
बहिंया पकरि समुझावेली बन तपसिन रे ना।
बेटी सामी के धरअ ना गुनहवां रे ना।।

ऐसी बहन पाकर किस भाई को गर्व न होगा! फिर शंकाएं और संदेह, जीवन की सच्चाई के सामने नहीं ठहरते किंतु अक्सर एक गांठ छोड़ जाते हैं, एक टीस छोड़ जाते हैं। लेकिन चंदा ने अंत में अपना सब कुछ पा लिया। ऐसी थी सात भाइयों की प्यारी बहन चंदा। अभी भी हमारे गांवों में यह कथा इसी प्रकार गूंजती हैः

हमरे बाबुलजी के सात बेटवना रे ना।
रामा सातौ के चंदा बहिनिया रे ना।। ☐

अपना-अपना भाग्य

एक राजा की तीन बेटियां थीं। राजा उन्हें बड़े लाड़-प्यार से रखता था। वह सदा उनका मुंह निहारता रहता था और जैसे ही उनके मुंह से कोई बात निकलती वह उसे पूरी करा देता था। इन राजकुमारियों की इच्छाएं पूरी करते समय राजा को इस बात का सदा गुमान रहता था कि उसकी बेटियां उसके प्रति कृतज्ञता से भरी होंगी और वे अपने भाग्य को सराहती होंगी कि उन्हें ऐसा प्रतापी पिता मिला है, जो उनका इतना ख्याल रखता है। संसार में क्या कोई अपनी बेटी को इतना मानता होगा!

राजा ने एक बार सोचा कि क्यों न मैं इनको बुलाकर उनसे पूछूं—वे किसके भाग्य से इतनी शान से रहती और जीती हैं। तब तक राजकुमारियां भी इतनी बड़ी हो चुकी थीं कि अपने पिता के प्रश्नों का उत्तर निर्भीकता से दे सकतीं। राजा ने बड़े गर्व से राजदरबार के बीच अपनी बेटियों को बुलाकर पूछने की ठानी।

सबसे पहले बड़ी राजकुमारी को बुलाया गया। महाराजा ने पूछा, कि "बताओ, तुम किसके भाग्य से खाती और पीती हो और किसके भाग्य से इतनी शान से रहती हो ?" बड़ी राजकुमारी ने बड़ी विनम्रता से कहा, "महाराज, आपने मुझे जन्म दिया है, हम आपके ही भाग्य से जीते, खाते और इतनी शान से रहते हैं।" राजा की उसके भरे दरबार में खूब वाहवाही हुई। महाराजा ने एक बहुत बड़े राजकुमार से अपनी बड़ी बेटी की शादी करने की सोची जो पास के ही दूसरे राज्य का बड़ा विख्यात शूरवीर था। फिर दूसरी राजकुमारी को दरबार में बुलाया गया—उससे भी यही प्रश्न किया गया और उसने भी बड़ी विनम्रता से महाराजा को बताया कि वह एकमात्र पिता के भाग्य पर ही निर्भर करती है। उसका खाना-पीना,रहना, घूमना-फिरना, मान-सम्मान सब कुछ राजा के भाग्य से ही उसे प्राप्त है। महल की सारी सुविधाएं भी तो महाराजा की ही देन हैं। उनके बिना उसका अस्तित्व ही क्या है। महाराजा बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने जय-जयकार के बीच घोषणा की कि वह अपनी इस बेटी का विवाह एक बहुत बड़े सम्पन्न घराने में करेंगे, जिसका ऐश्वर्य और यश चारों ओर फैलेगा

आखिर में राजा की तीसरी बेटी दरबार में लाई गई। राजा ने जब अपनी तीसरी बेटी से इसी प्रश्न को दोहराया तो बेटी के उत्तर से सारे दरबार में सन्नाटा छा गया। राजा ने बेटी को नासमझ जानकर एक बार फिर अपना प्रश्न दोहराया और कहा, "बेटी, सोच समझ कर जवाब दो, तुम किसके भाग्य से इस राजमहल में रहती हो ? तरह-तरह के राजसी व्यंजन जीमती हो और स्वर्ग के वैभव का आनंद राजमहल में रहकर उठाती हो ? बताओ, तुम किसके भाग्य पर निर्भर हो, यह वैभव किसके भाग्य से मिला है? बोलो, क्या तुम मेरे भाग्य से अपना वर्तमान और भविष्य नहीं बना रही हो ?"

किंतु तीसरी राजकुमारी ने बहुत निर्भीक और शांत भाव से कहा, "पूज्य पिताजी, मैं बहुत सोच-विचार कर निवेदन करती हूं कि जो कुछ भी मैं हूं और जो कुछ भी बनूंगी, वह केवल अपने भाग्य से ही, आपके भाग्य से नहीं, पिताजी। अब तक जो जीवन भी मैंने बिताया है वह अपने ही भाग्य से पाया है।" राजा उत्तर सुनकर अपना संयम खो बैठा और क्रोध से कांपते हुए अपनी तीसरी राजकुमारी को राज्य से बाहर निकालने का हुक्म दे दिया।

राज-दरबार संवाद सुनकर अवाक् रह गया। राजा ने राजकुमारी का त्याग करते हुए कहा, "यदि तुम अपने ही भाग्य से जीती आई हो और अपने ही भाग्य से जीने का दम भरती हो तो जाओ, तुम्हारा यहां क्या काम? जाकर जंगल में रहो तब तुम्हें पता चलेगा कि तुम यहां जिस सुख और ऐश्वर्य में पल रही थी, वह मेरे भाग्य के कारण था। तुम्हें जाकर पता लगेगा कि तुम्हारा भाग्य क्या है? वन-वन भटकोगी और दुर्दिन देखोगी तो होश ठिकाने आ जाएंगे। जाओ, निकल जाओ, इस राज्य की सीमा से बाहर।"

राजकुमारी को जंगल में ले जाकर उसके भाग्य पर छोड़ दिया गया। राजकुमारी अपने स्वाभिमान से इतनी भरी हुई थी कि बिल्कुल रोई नहीं। अपने भाग्य के भरोसे जंगल में रहने की उसने ठान ली। शाम होते-होते अंधेरा छाने लगा और उसे अपने रहने की चिंता हुई। आसपास कहीं कोई बस्ती न थी। दूर कहीं से रोशनी दिखाई देते ही वह इस उम्मीद से उस तरफ बढ़ चली कि शायद वहां कोई रास्ता हो जो उसे शरण दे सके। चलते-चलते वह थक कर चूर हो गई।

आखिर उसने अपने को एक पुराने राजमहल के खंडहर के सामने खड़ा पाया। ऊपर आकाश में पूर्णिमा का चांद था, चारों तरफ चांदनी छिटकी हुई थी। उसकी आंखें आनंद और खुशी से भर उठीं, उसने देखा कि महल में ऐश्वर्य का सारा सामान भरा पड़ा था किंतु रहने वाला कोई नहीं, सन्नाटा ही सन्नाटा था।

वह ज़ब भीतर पहुंची तो उसने एक बड़े कमरे में पलंग पर एक बेहद सुन्दर राजकुमार को लेटा हुआ पाया। किंतु यह क्या? राजकुमार के सारे शरीर में असंख्य छोटी-छोटी सुईयां चुभी हुई थीं और वह अचेत निश्चल पड़ा था। राजकुमारी से यह दृश्य देखा न गया। वह अपना दुख दर्द भूल गई और वहीं पास बैठ कर, राजकुमार के शरीर से एक-एक कर सुईयां बीन-बीन कर निकालने लगी। सुईयों को निकालते-निकालते सवेरा हो गया। केवल आंखों में चुभी दो सुईयां बाकी रह गईं।

थकान से राजकुमारी का बुरा हाल था। उसने सोचा 'क्यों न मैं इस बीच मुंह हाथ धो लूं और स्नान कर लूं तब आकर राजकुमार के आंखों से चुभी दोनों सुईयां निकालूं।' किंतु वह वहां से जैसे ही हटी, न जाने कहां से एक दूसरी स्त्री वहां आ गई। उसने राजकुमार की आंखों की दो सुईयां झट से निकाल दीं। राजकुमार ने आंखें खोलीं और दूसरी स्त्री का उपकार मानते हुए उसे अपनी सेवा में रख लिया। राजकुमार के जीवित होते ही राजमहल में चहल-पहल होने लगी। राजकुमार ने दूसरी स्त्री को रानी बना लिया।

इधर राजकुमारी जब लौट के आई तो वह सब देखकर ठगी-सी रह गई। वह अपने भाग्य को कोसती, इससे पूर्व ही दूसरी स्त्री ने राजकुमार से उसका परिचय अपनी दासी के रूप में कराया और उसे आज्ञा दी कि वह राजा के पास आने की चेष्टा न करे तथा जाकर दूसरे नौकर-चाकरों के साथ काम करे। दूसरी स्त्री राजकुमार के आसपास सदा बनी रही और राजकुमार को अवसर ही न देती कि वह स्वाभिमानी राजकुमारी के उपकार की असलियत से कभी परिचित भी हो। समय बीतता गया।

एक बार राजकुमार ने परदेस जाते हुए महल में सभी से पूछा कि तुम्हारे लिए वहां से क्या-क्या उपहार लाएं तो सबने अपनी मनपसंद की चीजें मंगाई किंतु अंत में राजकुमारी से पूछने पर उसने मना करते हुए यह कह दिया कि हमारे लिए 'नउजी' ले आइएगा। यानी "नहीं, नहीं, कुछ नहीं ! कुछ मत ले आइएगा, मैं कुछ नहीं चाहती।" राजकुमार ने भोलेपन में इसे वस्तु-विशेष का नाम मान लिया। राजकुमार ने रानी बनी दूसरी स्त्री और महल के दूसरे लोगों के लिए उपहार खरीदे तो राजकुमारी के लिए 'नउजी' की खोज शुरू हुई। भला इस नाम का कोई उपहार कहां मिलता। अंत में किसी हलवाई ने अपनी एक मैना को राजकुमार के हाथ मंहगे दामों में बेच दिया जिसे वह 'नउजी' कहता था।

राजकुमार खुशी-खुशी लौटा और उसने सबको अपनी-अपनी पसंद का उपहार दिया और राजकुमारी को मैना सौंप दी। देर रात तक राजकुमारी अपनी मैना से बातें करती और अपना दुख उसे सुनाकर, उसी के आगे अकेले में आंसू बहाती। मैना उसे ढाढ़स बंधाती। उसका जी बहलाने के लिए अपना गाना सुनाती। गाने में विधि के इस विचित्र विधान की बात भी कहती जिसमें राजकुमार की वास्तव में सेवा करने वाली राजकुमारी दासी की तरह रह रही है और इसी महल में दासी अपने छल-बल से रानी बन बैठी है।

राजकुमार जब कभी रात में अपने महल की निगरानी के लिए घूमने निकलता, उसे मैना के गाने की आवाज सुनाई देती। वह सुन-सुनकर हैरान होता। यह गीत कहां से कौन इतनी रात को गा रहा है ? एक रात आवाज के सहारे बढ़ता वह उस तरफ से गुजरा जिस तरफ राजकुमारी रहती थी। फिर क्या था! उसने कान लगाकर रोना, गाना और राजकुमारी को पूरी बात मैना से करते हुए सुन लिया।

जब राजकुमार के सामने पूरा रहस्य खुला तो सहसा उसे विश्वास न हुआ। उसने उसी क्षण दरवाजा खटखटाया और राजकुमारी से मिलकर वास्तविकता का पता लगा लिया।

दूसरे दिन भोर होते ही राजकुमार ने रानी बनी दासी को बुलाकर धिक्कारा । छल करने के कारण उसे महल से बाहर निकाल दिया। राजकुमारी को बुला कर बड़े आदर से अपनी पटरानी बनाते हुए जब राजकुमार ने पूछा कि तुम्हें दुख देने वाली इस दासी को क्या सजा दी जाए? तो राजकुमारी ने उसे क्षमादान देने का सुझाव दिया, जिससे वह अपने किये पर पश्चात्ताप कर सके।

राजकुमारी अपने राजकुमार के साथ राजपाट का सुख भोगने लगी और दासी उनकी सेवा में दिन गुजारने लगी। बहुत दिनों बाद जब राजकुमारी के पिता को उसके सुखी जीवन का समाचार मिला तो वह फूले नहीं समाए और यह मानने पर मजबूर हुए कि सबका अपना-अपना भाग्य होता है। कोई किसी दूसरे के भाग्य पर नहीं निर्भर होता। □

भरबीतन

एक थे भरबीतन, देखने में बित्ताभर के, लेकिन काम में पुरनियां यानि बड़े-बूढ़ों जैसे समझदार। एक दिन उनकी मां ने गोझा बनाया, बस फिर क्या पूछना था। भरबीतन गोझा लेकर बगीचे में जा पंहुचे और एक पेड़ पर चढ़ कर लगे गोझा खाने।

तभी एक बुढ़िया वहां आई और भरबीतन को कहने लगी, "ए बबुआ का खा तारअ, तनि हमरो के देअ।" (यानि ए बच्चा क्या खा रहे हो? थोड़ा हमें भी दो।) भरबीतन ने जवाब दिया, "दिखाई नहीं दे रहा, मैं गोझा खा रहा हूं, खैर, आंचल फैलाओ मैं तुम्हारे लिए भी एक टुकड़ा ऊपर से गिराता हूं।" उनके ही शब्दों में "अच्छा त फाड़ रोपअ गिरावतानी" बुढ़िया कहने लगी, "ना ऐ बबुआ फांड़ाइन लागी।" भरबीतन सोचने लगे कि अच्छे कपड़े की गंध अच्छी नहीं लगती तो क्या हुआ, हाथ फैला दो मैं उसी में टपका दूंगा और कहा, "अच्छा त आपन हाथ रोपअ"। बुढ़िया ने अपनी कठिनाई बताई कि हाथ से छिटककर भूमि पर गिर जाएगा, तो ठीक से खाते नहीं बनेगा। फिर भरबीतन ने जुगत सुझाई-"फेंक रहा हूं, भूइयां से उठाकर खा लेना।"

तब बुढ़िया ने आजिज आकर अपना पैर हिला-हिला कर गोझा खाते भरबीतन से अनुनय विनय की-"बबुआ, नू तनी भूइयां उतरि आव, काहे हरतुज कइले बाड़अ, बूढ़ी पर दया कर।" लेकिन भरबीतन नहीं उतरे तो नहीं उतरे। सोचने लगे ये मेरे पीछे क्यों पड़ी है? कहीं कोई दुष्टात्मा तो नहीं। हो न हो यह डाइन है। मां ने जैसा बचपन में बताया है वैसी ही विकराल तो लग रही है।

उधर बुढ़िया भी घिघियाए जा रही थी मरियल सी आवाज में, मैले-कुचैले कपड़ों में। वहीं पेड़ के नीचे बैठकर वह भरबीतन को कभी आशीष देती तो कभी अपनी दयनीय दशा बताते हुए, उस जैसे ही अपने पौत्र को याद करती हुई कहने लगी-"बाबू नूं तोहरा माथे मउर चढ़ो राजपाट मिलो, तोहरा नियर हमरो एगो नाती रहल हा" आंखो से टप-टप आंसू को पोंछती वह चिरौरी करने लगी,"तनि अपना हाथे खिया दअ...... खिया न द अपना हाथे, न जाने कब से उपास बानी।" पेड़ की डाल पर बैठे भरबीतन का मन दया से भर उठा। वह अपने को रोक नहीं पाया और धीरे से उतर कर लगे बुढ़िया के आंसू पोंछने। लेकिन यह क्या? बुढ़िया ने अपना मायाजाल समेटकर, भरबीतन को पकड़कर अपने झोले में डाल दिया, और अपने घर की ओर चल पड़ी।

भरबीतन उछले-कूदे, हाथ-पैर मारते रह गए, लेकिन उनकी एक न चली। जाते-जाते बुढ़िया को प्यास लगी। एक खेत किनारे अपना झोला, डंडा, गठरी-मोटरी खेत के डरार पर रखकर पानी पीने गई। जाते-जाते हल जोतते हलवाहों से कहती गई कि जरा हमारी गठरी-मोटरी का ध्यान रखना। बस, जैसे ही बुढ़िया उधर पानी पीने गई, भरबीतन ने उछलना-कूदना और रोना-चिल्लाना शुरू किया। आसपास के हलवाहों को जानते देर नहीं लगी कि मामला क्या है, दौड़ पड़े और उन्होंने भरबीतन को बाहर निकालकर उसकी गठरी में ईंट-पत्थर, ढेला-माटी, कांटे भर दिया। भरबीतन तो नौ-दो-ग्यारह हो गए थे।

बुढ़िया अपना साज-सामान लेकर अपने रास्ते चली। ईंट-पत्थर रास्ते में चलते-चलते बजते, तो वह समझती कि भरबीतन गाली दे रहा है, घास-फूस गड़ता तो समझती कि वह चिकोटी काट रहा है, आंखों में मिट्टी धूल झर-झर कर पड़ती तो वह समझती कि पैर की मिट्टी झाड़ रहा है और चलते- चलते चोट लगती तो वह समझती कि वह उसे मुक्का मार रहा है। रास्ते भर वह घर पहुंचने पर बदला लेने की चेतावनी देते घर पहुंची।

घर पहुंचते ही उसने अपनी पुत्रवधू को पुकारते हुए जमीन पर सारा बोझ पटक दिया। लेकिन गठरी खुली तो भरबीतन का वहां कोई पता न था। बस उसने गुस्से से अपना माथा पीट लिया और पैर पटकती वापस फिर उसी जगह जा पहुंची, जहां अपना सामान थोड़ी देर के लिए रखकर वह पानी पीने गई थी।

वहां उसने अपना रूप बदल लिया और साफ सुथरे कपड़े पहनकर भागती-दौड़ती भरबीतन के पीछे-पीछे उसके गांव की ओर इस उम्मीद से बढ़ी कि भरबीतन तो भरबीतन हैं, बित्ते भरके कितने ही तेज चले जाएंगे कितनी दूर। बस फिर क्या था? थोड़ी दूर पर भरबीतन उसे मिल गए। भरबीतन अब और होशियार हो गये थे। वह क्यों उसके कहने में दोबारा पड़ते? किन्तु इस बार भरबीतन के सामने बुढ़िया का दूसरा रूप था।

बुढ़िया ने कहा-"तुम मुझे पहचानते नहीं, मैं तुम्हारी नानी हूं। मैं तुम्हें लिवा ले जाने आई हूं अपने गांव।" भरबीतन ने अपनी असमंजस की स्थिति दर्शायी और झिझकते हुए कहा, "मैंने तो तुम्हें कभी देखा नहीं। मैं क्या जानूं, तुम कौन हो? चलो, घर पर तो मां से पूछकर चलूंगा।" बुढ़िया

ने बड़ा लाड़-प्यार दिखाते हुए कहा, "तुम कैसे पहचानोगे? तुम कितने छोटे थे जब हमने तुम्हें देखा था, चलो मेरे यहां, तुम्हारी मां भी तो चल रही है।" भरबीतन के बार -बार नकारने पर भी बुढ़िया उन्हें मनाती रही और अपने गोद में बिठाकर ले ही आई। अपने घर आकर उसने अपनी पूत्रवधू को सौंपते हुए पूरी चौकसी रखने का संकेत अपनी आंखों से दिया और बाहर से दरवाजा बंद करके नहाने चली गई।

इधर ओखली के पास ले जाकर जब भरबीतन का सर उसमें डाला जाने लगा तो भरबीतन चौंके और पूछा-"मामी-मामी, यह क्या कर रही हो? क्या भांजे के साथ मामी का ऐसा ही व्यवहार होता है?" "मैं तुम्हारी मामी क्यों होने लगी भला। खैर! एक बार मामी कहा है तो भांजे, मैं क्यों छुपाऊं?" और उसने सारी बात साफ-साफ भरबीतन को बता दी। तब भरबीतन के प्राण सूख गए, सांस ऊपर की ऊपर टंगी रह गई और वह पसीने से नहा उठे। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें।

तभी बुढ़िया की पुत्रवधू ने भरबीतन के बालों को छूकर परखते हुए कहा, "तुम्हारे बाल इतने लम्बे और मुलायम कैसे हैं?" बस भरबीतन ने स्त्री की बालों के प्रति कमजोरी को ताड़ लिया और तुरंत बोले-"मामी, मैं इसका रहस्य अभी बताता हूं। मेरी मां हर रोज हमारे बालों को ओखली में रखकर कूटती थी, इसी से ये लम्बे भी हो गए और मुलायम भी। तुम चाहो तो मैं अभी तुम्हारे बालों को इसी तरह मुलायम और लम्बे कर सकता हूं। बस तुम अपने बाल थोड़ी देर के लिए ओखली में डालकर यहीं बैठ जाओ।" भरबीतन की बातों में भोलापन था, मामी तुरंत तैयार हो गई। उसने अपना माथा ओखली के किनारे रख दिया और बाल समेटकर ओखली के बीचोंबीच। फिर क्या था भरबीतन ने मूसल चला दिया दनादन-दनादन। भरबीतन ओखली में उसके बाल कूटने की जगह उसका माथा चूर-चूर करने में लग गए।

उधर बुढ़िया नहा धोकर लौटी तो पूछने लगी-"क्या भोजन तैयार है, बहू?" इधर भरबीतन ने चादर ओढ़े-ओढ़े कंठ दबाकर धीरे से कहा-"थोड़ी देर और है, आप बैठिए, मैं खाना लगा रही हूं।"और पानी लेने के लिए बाहर की ओर जाते-जाते, भरबीतन चादर फेंककर नौ दो ग्यारह हो गए। बुढ़िया उसके आने का इंतजार करती, ऊंघती, झख मारती रह गई। □

नाम में क्या रखा है

किसी गांव में एक पाठशाला थी। पाठशाला में आसपास के गांव के लड़के पढ़ा करते थे। उनमें से एक था ठठपाल। उसे इस बात पर बहुत गुस्सा आता था कि उसका नाम और लोगों की तरह सुंदर न होकर ठठपाल क्यों रख दिया गया। कभी-कभी खेल-खेल में उसके साथी उसके इस बेकार-बेमतलब नाम के लिए चिढ़ाया करते थे और बार-बार उसकी हंसी उड़ाई जाती थी।

एक दिन उसने अपने गुरुजी से कहा-"क्यों नहीं आप हमारा नाम बदल देते हैं।" अच्छा सा नाम रख देने का अनुरोध सुनकर गुरुजी ने बताया-"नाम में क्या रखा है? नाम तो कोई कुछ भी रख लेता है। पुकारने के लिए कोई नाम होना चाहिए इसमें अच्छा बुरा क्या? वास्तव में महत्त्व तो काम का होता है। अच्छा काम करोगे, अपने आप अच्छा नाम कमाओगे।" ठठपाल को संतोष न हुआ। वह अपने साथियों के नाम सुन-सुनकर उसमें से अपने लिए कोई अच्छा सा अर्थपूर्ण नाम मन ही मन विचारने लगा। उसे अपने नाम के अच्छे न होने की ग्लानि होती।

कुछ दिनों बाद उसने फिर से अपने गुरुजी से विनती की-"गुरुजी, कुछ भी कीजिए, अच्छे नाम से अच्छे गुणों का बोध होता है और कोई अच्छा सा नाम रख लेने पर लोग हमारी हंसी तो नहीं उड़ाएंगे। मेरे इस नाम को सुनकर ही लोग हंसने लगते हैं।" गुरुजी ने इस बार उसे समझाने का एक दूसरा उपाय सोचा। उन्होंने ठठपाल के हट करने पर उसको समझाया-"सुनो ठठपाल। तुम स्वयं जाकर दूर-दूर तक लोगों से उनका नाम पूछ आओ और स्वयं पता लगाओ कि क्या सबके नाम जैसा तुम चाहते हो, वैसे ही अच्छे, सार्थक और उनके काम-धाम से मेल खाने वाले हैं?"

ठठपाल वहां से तुरंत अपने लिए सुंदर सा नाम खोजने निकला और गुरुजी की बात मानकर लोगों से उनके नाम और काम-धाम के बारे में पता लगाने लगा। जाते-जाते उसने थोड़ी दूर पर एक खेत में किसी कंडे (उपले) बीन-बीन कर गुजारा करने वाली स्त्री को साग खोंट-खोंट कर खाते हुए और निराई-गुड़ाई करते हुए देखा। मैले-कुचैले कपड़े पहने वह स्त्री उसे दरिद्रता की साक्षात मूर्ति लगी। उसने उस स्त्री से जब उसका नाम पूछा तो स्त्री ने तुरंत उसे अपना नाम लछमनिया बताया और फिर अपने काम में जा लगी। वह सोच में पड़ गया, नाम लछमनिया और ऐसी घोर दरिद्रता।

वह आगे बढ़ा। कुछ दूर और जाने पर एक व्यक्ति को उसने हल जोतते देखा। पास जाकर हलवाहे से पूछा, "भइया, तुम्हारा नाम क्या है? हलवाहे ने हल जोतते हुए आश्चर्य से पूछा,"मेरा नाम क्यों जानना चाहते हो, मैं तो धनपाल हूं, धनपाल ही मेरा नाम है।" ठठपाल ने कहा, "नाम धनपाल और काम हलवाहे का; वाह भाई वाह।" वह कुछ दूर और आगे बढ़ा। उसने एक अर्थी को जाते देखा, लोगों से पूछा यह किसकी अर्थी जा रही है? लोगों ने बड़े मासूमियत से कहा,"अमर अब इस दुनिया में नहीं रहे।" नाम अमर और गुजर गए देखते ही देखते!

ठठपाल ने आकर गुरुजी से सारी कहानी सुनाई। उसने बताया कि "गोबर के कंडे बीनने वाली, साग खोंट-खोंट कर खाने वाली, खेतों में निराई कर गुजारा करने वाली गरीब स्त्री का नाम लछमनिया, हल जोतने वाले का नाम धनपाल, मरे हुए आदमी का नाम अमर सुना। गुरुजी, अब मेरे मन में अपने नाम को बदलने का कोई इरादा नहीं रह गया। मेरा नाम ठठपाल ही ठीक है।"

जब कभी कोई उसके नाम के बारे में सवाल उठाता तो वह घूम-घूमकर सबसे इस बात को यों कहताः

बिनिया करत लछमनिया देखलीं
हर जोतत धनपाल।

अरथी चढ़ल अमर जे देखलीं
सबसे नीमन ठटपाल।।

□

कौन छोटा - कौन बड़ा

एक राजा था। उसके चार बेटे थे। चारों बेटे एक से एक सुंदर। दिन दूनी चार चौगुनी गति से बढ़ते राजकुमार तरह-तरह के गुणों के धनी थे। वह नीतिशास्त्र, घुड़सवारी, शिकार, तीर-कमान और तलवार चलाने में एक दूसरे से निपुण थे। परीक्षाओं और तरह-तरह की प्रतियोगिताओं में आगे निकल जाने के लिए निरंतर अभ्यास करते रहते थे।

होते-होते जब राजकुमार बड़े हो गए तब राजा सोचने लगा कि इन्हें राजकाज में लगाने से पहले इनकी परीक्षा लेनी चाहिए। राजा इसी चिंता में था कि मंत्री ने आकर उनकी चिंता का कारण पूछा। राजा ने कहा-" क्या पूछते हो मंत्री? चार बेटे हमारा सहारा बनें, राजपाट सम्भालने के योग्य हों, यही तो हमारा सपना था और अब जब हमारे सपने के सच होने की घड़ी आ गई है, मैं सोचता हूं कि इनको किसी तरह काम पर लगाऊं।" मंत्री ने झट जवाब दिया-"इसमें चिन्ता की क्या बात है? मैं उनकी परीक्षा का प्रबंध करता हूं। चारों राजकुमारों को चार दिशाओं में तीर छोड़ने को कहा जाए और फिर उनको यह भी कह दिया जाए की वह अपना-अपना तीर खोज कर घर ले आएं, जो जितनी दूर तीर फैंकेगा उसे उतनी दूर जाकर अपना तीर लाना होगा। इसके लिए उसे, उस इलाके के राजा को हराकर पूरे क्षेत्र को आपके राज्य में मिलाना होगा। इस तरह उतनी दूर का इलाका आपके राज्य में अपने आप शामिल हो जाएगा।"

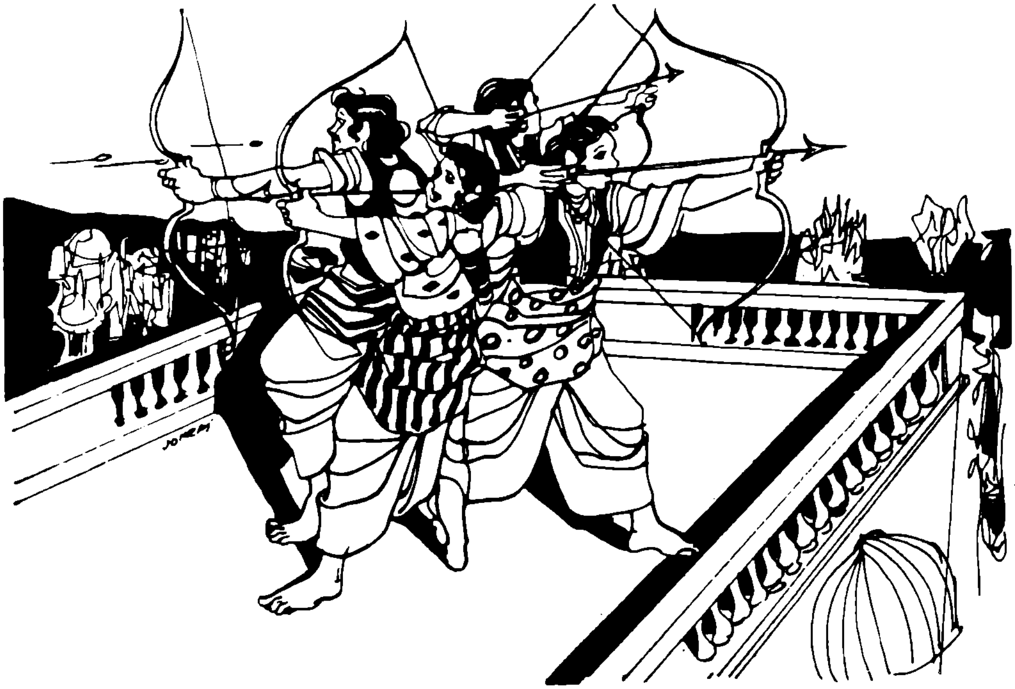

राजा ने मंत्री की सलाह मान ली और घोषणा करवा दी कि चारों राजकुमार तीर-कमान लेकर महल के ऊपर जा चढ़ें और वहां से वे अपने तरकस के चोखे तीर निकालकर चारों दिशाओं में छोड़ें। फिर देखा, परखा जाएगा, किसने कितनी दूर तीर फैंका है और कौन अपना तीर उस इलाके को जीतकर वापस कितनी जल्दी लाता है।

फिर क्या था। एक बहुत बड़ा समारोह आयोजित किया गया, राजकुमारों ने बड़ी ताकत लगा कर तीर फैंके और वे सभी अपने-अपने तीर की खोज पर निकल पड़े। उनके पीछे-पीछे पता लगाने के लिए राजा के घुड़सवार भी चले।

बड़े राजकुमार का तीर अपने राज्य में ही गिरा था, थोड़ी दूर पर मिल गया। बाकी बचे तीनों राजकुमार अपने-अपने तीर की खोज में बहुत दूर निकल गए। बहुत दिनों तक उनका कोई पता न लगा।

इधर राजा दिन प्रतिदिन दुबले और बीमार होते गए। आखिर में राजकुमारों की खबर न मिली तो उन्होंने अपने अंतिम समय में सबसे बड़े राजकुमार को अपना राजपाट सौंप दिया। किंतु साथ ही कहा कि "अभी तुम गद्दी सम्भालो मगर राज्य तो उसी का होगा जो परीक्षा में विजयी होकर लौटेगा।" राजा ने यह भी कहा कि "उनके वापस आने पर तुम राजपाट उसी को सौंप देना। ध्यान रखना कि जिस राजकुमार का तीर सबसे दूर जाकर गिरा होगा, जो अपना तीर उस राज्य को जीत कर ले आएगा, वही इस राजपाट का हकदार होगा। तुम राज्य के लोगों का मन जीतने में अपना समय बिताना क्योंकि तुम्हारा तीर तो इस राज्य के भीतर ही गिरा था। इस राज्य को तुम क्या जीत पाते? खैर अपने राज्य के लोगों के दिलों को जीतने की कोशिश करना।"

राजपाट पाकर बड़े राजकुमार को राजा की सीख कहां याद रहती, राजा के आंख मूंदते ही वह बड़ी धूम-धाम से राजगद्दी पर बैठा। राजतिलक हुआ और बड़े ठाठबाट से राज करने लगा। फिर रासरंग में न उसे अपने पिता की शर्तों की याद रही, न उसे प्रजा की सेवा की और न अपने भाइयों के प्रति अपने कर्त्तव्यों की। उसने अपने भाइयों की कोई खोज खबर न ली।

इधर उसके तीनों भाई तीन दिशाओं की तरफ राज्य पर राज्य जीतते बढ़े जा रहे थे। तीर की खोज में कई बरस बीत गए। बरसों बाद अपने राज्य की खबर एक गांव से दूसरे गांव होते हुए उन लोगों तक पहुंची। उन्हें बड़ा दुख हुआ। पिता के गुजर जाने का दुख तो गहरा था ही, भाई के विश्वासघात ने उनके हृदय को छलनी कर दिया।

तीनों लाचार थे। पिता की आज्ञा, परीक्षा की शर्तों और अपने-अपने कर्त्तव्य निभाने के प्रण से कैसे मुंह मोड़ते? लौटते तो कैसे, जब तक उनके तीर उन्हें नहीं मिल जाते? तीनों भाइयों ने मिल-बैठकर सलाह की। अपने जीते हुए राज्य के राजाओं को भी इकट्ठा किया और मिल-बैठकर घंटों सलाह की गई। तय किया गया कि अपने-अपने राज्य में सभी राजकुमारों के धनुष से छूटे हुए तीर की खोज सबसे पहले की जाए। जैसे ही तीर मिल जाएंगे वे अपने राज्य को लौट जाएंगे। यह भी तय पाया कि जीता हुआ राज्य हारे हुए राजाओं को लौटा दिया जाएगा।

फिर क्या था! जो काम अकेले दौड़-धूप और जोर-जबरदस्ती से न हुआ, वो काम मेलजोल और सहूलियत से हो गया। गांव-गांव आदमी गए और थोड़े ही दिनों में तीर खोज लिए गए। सबसे छोटे भाई का तीर सुदूर पूरब दिशा की ओर मिला। वहां के राजा ने अपनी रूपवान बेटी से छोटे राजकुमार का विवाह करते हुए अपनी सारी सेना उसे सौंप दी। इसी तरह पश्चिम और दक्षिण में

दूसरे दो भाइओं के तीर मिले, जहां से उन्होंने जन-धन सहित सुंदर राजकुमारियां पाईं। सेना लेकर वे भी अपने छोटे भाई के साथ आ मिले।

तीनों भाइयों ने मिलकर अपने सबसे बड़े भाई के अन्याय के विरुद्ध चढ़ाई कर दी। खूब घनघोर लड़ाई हुई, पैदल सिपाही, हाथी-घोड़ों पर सवार वीर योद्धा, तीर-कमान, तलवार-भाले लेकर जूझने लगे। खून की धारा बह चली। लड़ते-लड़ते तीन दिन बीत गए। सेनाएं एक दूसरे के खून की प्यासी हो रही थीं। आखिर में छोटे भाई को एक तरकीब सूझी, वह वेश बदल कर राज्य में प्रवेश कर गया और योगी बनकर गांव-गांव घूमने लगा। उसने पाया कि सूखे-अकाल से खेत सूख रहे हैं, किसान भूखों मर रहे हैं। उसने सबके बीच ये बात फैला दी कि राजा के पाप से सूखा-अकाल पड़ गया है। भाइयों का हक छीनकर अपने पिता से विश्वासघात करने वाला अन्यायी सबको ले डूबेगा। सर्वनाश हो जाएगा।

जब प्रजा को राजा के अन्याय और अपने भाइयों से किए गए विश्वासघात का पता चला, तो वह विद्रोह में उठ खड़ी हुई। लोगों ने गढ़ का फाटक खोल दिया। गढ़ के बाहर जमी हुई तीनों भाइयों की सेनाएं भीतर आकर अन्यायी राजा की सेनाओं से युद्ध करने लगीं।

प्रजा का विश्वास खोकर कितनी देर चलती बड़े राजकुमार की मनमानी। राजा बना राजकुमार संकट के समय हिम्मत हारकर महल के चोर दरवाजे से निकल भागा। फिर क्या था? बड़े धूमधाम से तीनों राजकुमारों का कब्जा हो गया। छोटे ने बड़े को गद्दी पर बैठने को कहा तो बड़े ने मंझले को। किसी को राज का मोह नहीं था। सभी त्यागी, वीर बहादुर थे।

तीनों में जो बड़ा राजकुमार था उसे ही सबने राजा बनाया और मंझले को मंत्री पद सम्भालने को कहा। छोटे भाई ने प्रजा की सेवा को ही अपना काम मानकर घोषणा की- “जिस काम को न कर पाने के कारण सबसे बड़े भाई को राजपाट से हाथ धोना पड़ा है, वह प्रजा सेवा का काम मैं करूंगा।” तब से योगी बनकर गांव-गांव, घर-घर वह घूमने लगा। राज्य में सुख शांति छा गई। प्रजा बड़ी सुखी थी, न्याय का बोलबाला था, तीनों भाइयों में बड़ा मेल था, छोटे-बड़े का लिहाज था, विद्याबुद्धि का राज था, दूर-दूर तक राजा की धाक थी। ☐

कोठिला काहे का

एक राजा की बेटी अपूर्व सुंदर थी। साथ ही बड़ी चतुर भी थी। बेटी सदा यह सोचती कि वह कोई ऐसा काम करे जिसे देख सब चकित रह जाएं। एक दिन राजकुमारी ने देखा कि जिस हंडिया में दूध गरम होता है, उसके तले में कुछ जम जाता है। दासी उस खुरचन को फैंक देती है। राजकुमारी ने उस दासी से कहा कि यह खुरचन फैंका न करो। धीरे-धीरे राजकुमारी के पास बहुत सी खंखोरी यानि खुरचन जमा हो गई। तो उसने उसका एक कोठिला बनाया। वह इतना बड़ा कोठिला था कि उसमें कई मन अनाज आ सकता था।

राजकुमारी ने कोठिला पूरा करके राजा को दिखाया। राजा ने कोठिला छूकर देखा-बिल्कुल चिकना मक्खन की तरह, लेकिन सख्त भी था। राजा ने पूछा,"बेटी यह कोठिला काहे का बनाया है?"

"उंह ऊं, यह तो आपको ही बताना पड़ेगा," बेटी ने दुलार से कहा।

राजा ने तरह-तरह के नाम लिए- मोम, चीनी, मक्खन। पर बेटी हर बार न करती और खिलखिलाकर हंसती जाती। अंत में राजा ने कहा,"अच्छा बेटी, हमने हार मानी।"

बेटी ने राजा के कान में बताया, "यह खंखोरी का बना है!"

अब तो राजा के आश्चर्य की सीमा न रही। बेटी की चतुराई देखकर राजा बड़े खुश हुए। कोठिला धूप में रखा हुआ सूर्य की किरणों से चमक रहा था और दूध में मिला हुआ घी रिस-रिसकर

ऊपर आ गया था जिससे कोठिला एकदम चिकना सफेद दिख रहा था। राजा कुछ सोचते रहे, फिर उन्होंने प्रतिज्ञा कि जो भी कोई यह बता देगा कि यह कोठिला किस चीज का बना है, उसी के साथ राजकुमारी का ब्याह होगा।

अब क्या था, दूर-दूर के देशों से राजकुमार आने लगे। सभी चाहते थे कि इस अपूर्व सुंदरी और चतुर सुकन्या से हमारा विवाह हो। पर राजकुमार आते और लौट जाते। किसी की समझ में न आता कि कोठिला काहे का बना है। धीरे-धीरे राजा को चिंता होने लगी। कभी उन्हें दुख होता कि न जाने किस कु-घड़ी में उन्होंने यह प्रतिज्ञा कर ली।

एक दिन एक बहुत ही समृद्धशाली देश का राजकुमार आया जो स्वयं भी बड़ा वीर और शिक्षित था। सभी लोगों की इच्छा थी कि राजकुमारी का विवाह इसी राजकुमार के साथ हो। राजकुमार कोठिला देखने जाने वाले थे कि इसी समय एक दानव ने आकर राजा से प्रार्थना की कि वह यह बता सकता है, कोठिला काहे का बना है। राजा को यह सुनकर बड़ा क्रोध आया। राजा ने कहा,

"तुम एक दानव होकर राजकुमारी से विवाह करने की इच्छा रखते हो। तुमने राजा का और उसकी बेटी का अपमान किया है, इसका फल तुम्हें भोगना पड़ेगा।"

पर वह जरा भी विचलित न हुआ। उसने विनम्रता से कहा,

"महाराज, आपने जो नगर में डोंडी पिटवाई थी, उसमें तो कोई भी ऐसी शर्त न थी कि कोई अमुक इसको नहीं बता सकता।"

राजा को क्रोध तो बहुत आया पर वे स्वयं अपने वचनों से बंध गए थे। दूसरे देश का राजकुमार सामने खड़ा था। उसके सामने उन्होंने अपने वचन से फिरना ठीक न समझा। फिर राजा ने सोचा जब इतने बड़े-बड़े विद्वान यह न बता पाए कि यह कोठिला काहे का बना है तो यह अज्ञानी क्या जाने? सब सोच-समझकर राजा ने उससे कहा- "तुम चल सकते हो।"

राजा की बेटी जब दूध की हंडिया में से खंखोरी निकाल-निकालकर छत पर बैठी-बैठी कोठिला बनाया करती थी, उसी समय रोज दानव उसी रास्ते घूमने जाया करता। वह रोज देखा करता कि राजा की बेटी अब खंखोरी निकाल रही है, अब कोठिला बना रही है। इसलिए जैसे ही वह छत पर पहुंचा उसने बताया, "राजा साहब, सच बात यह है कि कोठिला खंखोरी का बना है।"

अब क्या था सारे महल में मौत का सन्नाटा छा गया। दानव के साथ राजा की बेटी का विवाह कैसे हो? राजा ने उसको बहुत समझाया, पर वह न माना, बार-बार कहता, "आपके वचनों के अनुसार अब राजकुमारी मेरी है।"

दुख और विवशता में राजा की बुद्धि काम नहीं कर रही थी। अंत में उन्होंने कहा, "मैं राजा हूं, तुमको जान से मरवा सकता हूं। अच्छा हो तुम इसी समय देश छोड़कर चले जाओ।"

यह कहकर राजा ने उसे नगर से बाहर निकाल दिया और नगर द्वार पर पहरा बैठा दिया। इधर राजा ने नगर में डोंडी पिटवा दी कि रूपकुमार ने राजा की प्रतिज्ञा पूरी की है, उसी के साथ राजकुमारी का विवाह होगा।

खूब धूमधाम से विवाह की तैयारियां होने लगी। राजकुमारी के लिए गहने-कपड़े बनने लगे। तरह-तरह के पकवानों की सुगंध से नगर महक उठा। राजमहल के आंगन में चारों कोनों में चार

खम्भे गाड़कर बीच में मंडप सजाया गया। मंडप में धूप न आए, इसलिए मंडप के ऊपर आम की पत्तियों को खूब घना करके बिछा दिया। घर में सुहाग गाए गए। गौरी-पूजन हो रहा था। इसके बाद सिंदूरदान की बेला थी। लोगों ने सुना कि मंडप के ऊपर कुछ आवाज हो रही है। इधर-उधर देखा पर कुछ दिखाई न दिया। सब अपने-अपने काम में लग गए।

उधर दानव भी अपने काम में लगा हुआ था। पहरेदारों की नजर बचाकर किसी तरह नगर में घुस आया और भीड़भाड़ में महल में घुसकर मंडप की छत पर छिपकर बैठ गया। वह ठीक उसी जगह बैठा था, जहां उसके नीचे राजकुमारी बैठी हुई थी। जब सिंदूरदान की बारी आई तो नाइन ने राजकुमारी के सिर से कपड़ा हटाया तो ऊपर से बहुत-सा सिंदूर उसने राजकुमारी की मांग में डाल दिया। सभी को आश्चर्य हुआ कि मंडप के ऊपर से सिंदूर कैसे गिरा, पर कुछ समझ में न आया। राजा के दिल में चोर था, वह समझ गए हो न हो यह दानव ही था, पर उन्होंने उस समय चुप रहना ही ठीक समझा।

खैर विवाह हो गया, और भी सब रस्में हो गई। सब हारे-थके सो गए। राजकुमारी और उसका पति दोनों महल की छत पर सो रहे थे। राजकुमार तो गहरी नींद में सो गया था, पर राजकुमारी की आंखों में नींद न थी। उसे तरह-तरह की चिंताएं सता रही थीं। उसे बार-बार लगता कि दानव आ रहा है। इसी तरह आधी रात बीत गई कुछ खटका हुआ। राजकुमारी ने देखा कि दानव बिजली की तरह लपका और उसने रूपकुमार के दो टुकड़े कर दिए। साथ ही राजकुमारी को बांधकर अपने साथ ले आया। बेचारी राजकुमारी चिल्ला भी न पाई।

दूर जंगल में अपने घर लाकर दानव ने राजकुमारी को खोल दिया और बोला, "अब खंखोरी से कोठिला नहीं बनाओ। यहां बैठकर पशु-पक्षियों से बातें करो, तुम राजकुमारी नहीं दानव-पत्नी हो।" बेचारी राजकुमारी दुर्भाग्य पर आंसू बहाती रही। उसे सबसे बड़ा दुख रूपकुमार की मृत्यु का था। वह उसके लिए व्याकुल थी। एक दिन बीत गया। दानव दूर शहर में शिकार ढूंढने चला गया और अपनी कुतिया को राजकुमारी की रखवाली के लिए छोड़ गया।

राजकुमारी जब रोते-रोते थक गई तो कुछ सोचकर उसने अपनी सलमे-सितारे से कढ़ी जूती कुतिया के आगे फेंक दी। दानव की कुतिया उसी जूती को फाड़ने में लग गई। राजकुमारी बिना सोचे-समझे भागने लगी। उसके पैर में कांटे चुभ गए, कपड़े फट गए, पैरों में खून बहने लगा, पर राजकुमारी बेतहाशा भागती रही, भागती रही। अब जंगल खत्म हो गया था और गंगा का किनारा आ गया था। राजकुमारी ने देखा– दूर एक चंदन की चिता जल रही है। नगर के सब लोग शोक मुद्रा में खड़े हैं

राजकुमारी को सब समझते देर न लगी। शोक से व्याकुल जो लोग चिता के पास खड़े थे, वो राजकुमारी को अच्छी तरह पहचान भी न पाए कि राजकुमारी जलती चिता देख विलाप करने लगी। उसका सब कुछ लुट गया था। खंखोरी का कोठिला दुखदायी बना। □